International Journal of Research in Hindi
www.hindijournal.in
ISSN: 2582-3493
Received: 02-04-2023, Accepted: 17-04-2023, Published: 02-05-2023
Volume 5, Issue 2, 2023, Page No. 9-11

रामनरेश पाठक के नवगीत में लोकतत्व

शशांकधर शेखर[1], डॉ आनंद कुमार सिंह[2]
[1] शोधार्थी, हिंदी विभाग, मगध विश्वविद्यालय बोधगया, बिहार, भारत
[2] एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, गया कॉलेज, मगध विश्वविद्यालय बोधगया, बिहार, भारत

सारांश
कविवर राम नरेश पाठक के नवगीतों में लोक मुखरता से सामने आया है, इनके नवगीत आमजन के दुःख दर्द पीड़ा व प्रेम के आदिम राग से संश्लेषित है। वे मूलतः गाँव में पले बढे ग्रामीण माहौल कृषक संस्कृति जिसमें परस्पर साहचर्य का भाव होता है एक दुसरे के सुख दुःख में शामिल होने का भाव होता है। इनके नवगीतों में वह ग्राम्य संस्कृति रची बसी दिखाई देती है। नवगीत कोई एकदम से नई विधा नहीं है श्रमिक संस्कृति में गीत मानवों के सुख दुःख के साथी रहे हैं। हमारे यहाँ रोपनी, जंतसर, कटनी, तीज, जितिया, सोहर छठ सबकी परम्पराएँ रहीं हैं और सबके अलग अलग गीत रहें हैं। नवगीत का बीज लोक में मौजूद इन्ही कृषक श्रमिक समाज के दुःख दर्द के गीत की भूमि में पड़ा वही से अंकुरित, पुष्पित, पल्लवित हुआ और आकर ग्रहण किया। इस शोध आलेख में हम कवि के नवगीतों में व्याप्त ग्राम्य संस्कृति एवं लोकतत्वों की पड़ताल करेंगे।

मूल शब्दः लोकतत्व, नवगीत, श्रमिक, कृषक, संस्कृति, मुनिमानस, समकालीन, आदिम त्रासद, तीज, जितिया रोपनी जंतसर, पल्लवित, ग्राम्य

मूल आलेख

नवगीत का समय 1950 के आस पास से शुरू हुआ था और बिहार के मुजफ्फ़रपुर के राजेंद्र प्रसाद सिंह के द्वारा नवगीत आन्दोलन की शुरुआत किया गया स नवगीत का विकास नई कविता से हुआ तथा औपचारिक रूप से इसकी घोषणा 1958 गीतांजली के प्रकाशन के साथ होती है तथा इसकी भूमिका में उन्होंने इसे परिभाषित करते हुए लिखा है कि "समकालीन हिंदी कविता महत्वपूर्ण और महत्वहीन रचनाओं के विस्तृत आंदोलन में गीत–परंपरा 'नवगीत' के निकाय में परिणति पाने को सचेष्ट है। ...नवगीत नयी अनुभूतियों की प्रक्रिया में संचयित मार्मिक समग्रता का आत्मीयतापूर्ण स्वीकार होगा, जिसमें अभिव्यक्ति के आधुनिक निकायों का उपयोग और नवीन प्रविधियों का संतुलन होगा।"[1]

हिंदी के प्रमुख नवगीतकारों में प्रमुख तौर पर शंभुनाथ सिंह, केदारनाथ सिंह, गोपालदास नीरज, धर्मवीर भारती, रवीन्द्र भ्रमर, रमेश रंजक, कुमार शिव, वीरेन्द्र मिश्र, कुँवर नारायण, जगदीश गुप्त, बालस्वरूप राही, रामदरश मिश्र, नरेश सक्सेना, ओम प्रभाकर, बुद्धिनाथ मिश्र, राजेन्द्र प्रसाद सिंह उमाकांत मालवीय तथा रामनरेश पाठक आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

नवगीत में आम आदमी की पीड़ा, उसकी विवशताएँ, शोषण आदि को नवगीतकारों ने सीधे–सीधे प्रस्तुत किया, यही कारण है कि नवगीत आम आदमी से सीधे जुड़ रहा है, उसके दुख–दर्द को वाणी दे रहा है। नवगीत में यदि आम आदमी की भाषा व मुहावरों के विशेष शब्द नहीं होंगे तो भला वह आम आदमी को व्यक्त कैसे कर सकेगा। लोक समाज की एक और विशेषता है कि वह जो कुछ माँगता है लोक से ही माँगता है, किसी और के सामने हाथ फैलाने वह कभी नहीं जाता है। उसकी आवश्यकताएँ सीमित हैं और उसका मन बहुत बड़ा है, वह स्वयं अभावों में जीता है परन्तु किसी से अपेक्षा नहीं रखता। वह भाषा का डिक्टेटर होता है। शब्दों को स्वयं निर्मित करता है, स्वयं लोकोक्तियाँ गढ़ता है, अपने मुहावरे स्वयं बनाता है और समय–समय पर अपने लिए काव्यों और महाकाव्यों को भी रचता है। परन्तु पढ़े–लिखे प्रबुद्धजन उसके मूल स्वरुप में थोडा हेर फेर करके उसे अपना सृजन कहने लगते हैं।

लोक साहित्य के पुरोधा डा. सत्येन्द्र के शब्दों में– ''जन मानस और मुनिमानस का संघर्ष आज का नहीं है। मुनि ने सदा यह दावा किया है कि उनकी रचना में शाष्वत प्रकट होता है, और उसने जहाँ तक हो सका है जन और उसकी कृति की अवहेलना की है, उसे हेय बताया है।..... शताब्दियों पूर्व वेदों की रचना हुई। उन्हें जिस वर्ग ने निर्माण किया, उसी वर्ग के अन्य व्यक्तियों उसे अलौकिक और अपौरुषेय बताया। ऐसा उनका अपना आतंक और प्रभाव जमाने के लिए किया जाता रहा। यह आधुनिक काल तक न रह सका। लौकिक काव्य की उद्भावना हुई और आदि कवि बाल्मीकि ने रामायण रच डाली, वह उनकी रचना मुनि–मानस का प्रतिफलन न था, नहीं तो उसे लौकिक न कहा जाता। किन्तु मुनि–मानस एक और धाँधली करता रहा है। जन–मन की सृष्टियों को वह अपनी बनाता रहा है। बाल्मीकि और उनके वर्ग की रचनाएँ मुनि–मानस की वस्तुएँ हो गईं। जन का जो सुन्दर था उसे अपने लिया गया। वह परिमार्जन और संस्कार करना जानता है। लोक मानस से सामग्री लेकर उन पर केवल कलई मुनि–मानस कर देता है। मुनि को विद्वान कहा जा सकता है, तत्तवदर्षी कहा जा सकता है, किन्तु उसके पास जो कला है वह अपनी नहीं। कला के लिए उर्वर भूमि की आवश्यकता होती है। स्वतंत्रता और मुक्ति ही उर्वरता है।[2]

कविता मनुष्य को और बेहतर मनुष्य बनाने के उद्देष्य से लिखी जाती है। जो कविता लोक के जितने निकट होगी, वह उतनी ही लोकप्रिय एवं दीर्घजीवी होगी। क्योंकि प्रत्येक मनुष्य लोक से किसी न किसी प्रकार से जुड़ा हुआ है। लोकजीवन से विलग होकर कोई व्यक्ति बहुत दिनों तक जीवित नहीं रह सकता। उसे किसी न किसी रूप में लोक पर निर्भर रहना ही पड़ता है। लोक से ही निकल कर हम आधुनिक और अत्याधुनिक बनते हैं। कभी–कभी हमें लगता है कि आधुनिकता के शिखर पर खड़े हाने के बाद लोक से हमारा भला क्या रिश्ता है? परन्तु यह उसी प्रकार है जैसे किसी पेड़ की कोई डाली या पत्ती पेड़ के शिखर पर पहुँचते ही अपने को पेड़ की जड़ से अलग समझने का भ्रम पाल ले। ठीक इसी प्रकार से साहित्य का सम्बंध लोक और लोक जीवन से है।

वासुदेव शरण अग्रवाल के शब्दों में''वही साहित्य लोक में चिरजीवन पा सकता है, जिसकी जड़ें दूर तक पृथ्वी में गई हों। जो साहित्य लोक की भूमि के साथ नहीं जुड़ा, वह मुरझा कर सूख जाता है।'समय के अनुसार कविता की विभिन्न विधाओं में परिवर्तन होता रहता है। क्योंकि एक ही तरह की कविता को सुनते–सुनते पाठक ऊबने लगता है और वह कुछ अलग हटकर पढ़ना व सुनना चाहता है। परिणामस्वरूप समय–समय पर कविता की विधाओं में परिवर्तन होता रहता है। गीत के बाद नवगीत इसी परिवर्तन का ही परिणाम कहा जा सकता है। इस शोध आलेख में हम हिंदी काव्य संसार में बिहार के नवगीत के पुरोधा पंडित राम नरेश पाठक के नवगीतों में लोक तत्व की पड़ताल करेंगे।

नवगीतकार श्री रामनरेश पाठक की संपूर्ण गीत रचना में अर्न्तभावात्मक सौन्दर्य का प्रस्फुटन प्रकृति के अनेक मधुर एवं मसृण उपादानों के माध्यम से हुआ है। गीतकार के अन्तर्जगत में सौन्दर्य की सौम्यमूरत जो सूक्ष्मरूप में विद्यमान है, उसी की शाश्वत, प्रत्यक्ष और प्राकृतिक अभिव्यक्ति है, उनकी गीत रचना।

हिन्दी साहित्य के इतिहास में नवगीतकारों की अगली पंक्ति के नामों में गिने जानेवाले श्री रामनरेश पाठक के नवगीत प्रकृति के परितः रचे गए हैं।। नवगीतकार रामनरेश पाठक के नवगीत में ग्राम्य जीवन के सौंदर्य सहज ही दृश्यमान होते हैं स उनके नवगीतों में लोकतत्वों की पड़ताल करते हुए हम पाते हैं कि उनके नवगीतों में लोक के सहज प्रतीक पीपल ताल तलैया,ग्रामीण शब्दावलियाँ सुगिया स ग्राम जीवन के आस–पास विहँसती प्रकृति और उसके सौन्दर्य रूपों का चित्रण अत्यन्त सरस और सहज रूपों में किया गया है। चित्र यथावत हैं, फलतः बिम्ब आकर्षक और मनोहारी हैं। स्पष्ट बिम्बों में मसृण गंधों की मादकता है। उदाहरणार्थ– 'एक गीत लिखने का मन' काव्य की कुछ पंक्तियाँ द्रष्टव्य

नील तलैया लहरे काँपे चँदा झूला झूले
पीपल की धानी पात डोले रे
भींग रहा होगा सुगिया के मन का कोना–कोना।

इन गीतों में गँवई शब्दों के माध्यम से जीवन सौन्दर्य का भावनात्मक रूप अभिव्यक्त हुआ है।

लोकतत्व का मूल स्वर प्रेम है और कवि रामनरेश पाठक का यह प्रेम ठेंठ देशी प्रेम है जिसने गीतों को आदिम राग दिया है स सच तो यह है कि इनके अधिकांश गीत सौन्दर्य के सरोवर में मानो प्रेम कमल का प्रस्फुटन है। यही कारण है कि गीतकार प्रेम और सौन्दर्य की नई धारा से युग और जीवन को जोड़ते दीख पड़ते हैं।

इनके गीतों में महुए के पीछे से चाँद झाँकता है, हवाएँ पराग बाँटती हैं, चाँद टेसू के फूल से टहक उठता है, तन का हिरण प्रीति से नहाता है, क्वारी किरण चुपके पराग चुन जाती है।

महुए के पीछे से झाँका है
चाँद पिया आ।
आँगन में बिखराए जूही के फूल
पलकों तक तीर आये सपनों के कूल
नयन मूँद लो, बड़ा बांका है चाँद
पिया आ
बाँट गयी सान्झिल हवाएँ पराग
बाकी स्वर लौट गए, शेष वही राग
टेसू के फूल–सा टहका है चाँद
पिया आ

कवि मन कजरी और मल्हार जैसी लोकगीतों में व्याप्त वेदना को अपने कविताओं में स्थान देता है स कविवर राम नरेश पाठक की एक एक गीत लिखने का मन शीर्षक कविता में इन प्रतीकों को देख सकते हैं।

मगर रामनरेश पाठक जैसा समर्थ कवि कभी भी कोरे कल्पनालोक में विचरण नहीं करता। गांव–प्रकृति के उकेरे गए चित्र उनकी स्मृतियों के आईने से प्रतिबिंबित–आलोकित तरल अभिव्यक्ति है हर गंवई मन की, जिसने वाकई गांव को जिया है। इसमें न तो पलायनवादी दृष्टिकोण है, न ही कोरी कल्पनाशीलता। यह महानगर की मृगमरीचिका से अपने असली घर और जड़ों की ओर वापसी का सूचक है। मगर सिक्के के दूसरे पहलू को भी कवि चित्रित करना नहीं भूलता।

'गाँव–गाँव खौलने लगे,
गर्म तेज चल रही हवा

इस प्रकार रामनरेश पाठक के नवगीत की भाषा, छन्द, बिम्ब, प्रतीक अप्रस्तुत विधान सभी में एक नवीनता है। स्वप्निल रंगीन कोमलकान्त शब्दावली के साथ लोकजीवन से जुड़ी भाषा का सम्यक प्रयोग दिखाई देता है।इसके साथ ही 'के साथ ही कवि उन तथ्यों की पड़ताल भी बखूबी करता है, जिनकी वजह से जीना दूभर हो गया है।

अपराधों की आँधी
और दमन की भट्टी
बूढ़ों, बच्चों, युवकों, की अथाह सिरकट्टी
शीलभंग, दहन, जहर, लूट ही व्यापार हुई
दिन रेगिस्तान, रात फिर पहाड़ हुई।

आज जब हम नई सहस्त्राब्दी और इक्कीसवीं सदी की अगवानी में पलक पावड़े बिछाए हुए हैं, कवि इस रचनाविरोधी माहौल से क्षुब्ध है। यह एक अहम सवाल है कि इस साहित्यिक सांस्कृतिक प्रदूषित परिवेश में आख़रि 'किसके लिए' रचा जाये साहित्य ?

किसके लिए लिखते हो गीत, कविताएँ
यहाँ साहित्य कोई नहीं पढ़ता।

हालाँकि औपचारिक रूप से हिंदी में नवगीत का शुभारम्भ 1958 में राजेंद्र प्रसाद सिंह के द्वारा 'गीतांगिनी' के प्रकाशन से जिसमे भी कविवर रामनरेश पाठक की भी रचना संकलित है परन्तु पाठक में नवगीत का बीज पहले से ही विद्यमान था और उन्होंने 1944 में ही लिख दिया था।

एक दिन बाँछे खिली थीं।
रोज मिलती थी सलोनी,
प्रेम की नजरें मिली थीं।
पर न मेरा खिला था,
हाय वो नजरें मिली थी।
वह थी विह्वल
पर न मैं था,
प्रेम में पागल उनींदा।
निकुंज निलय में मिली थी,
हाय वो नजरें मिली थी।
एक दिन आँखे मिली थीं।
एक दिन बाँछे खिली थीं।" (केतकी गया 03.03.1944)

पंडित रामनरेश पाठक की पुस्तकाकार प्रकाशित रचनाओं में प्रथम कृति है 'अनामा' जिसमें कुछ छन्दोबद्ध रचनाएँ और कुछ मुक्त

छन्द की रचनाएँ संकलित हैं। इस कृति का प्रकाशन 1952 में हुआ था। 1958 में प्रकाशित इनकी दूसरी रचना 'क्वार की साँझ' में गीत कम हैं, अधिकांश प्रयोगशील रचनाएँ हैं। उन्होंने स्वयं एक साक्षात्कार में स्वीकार किया है कि, इस संग्रह ('क्वार की साँझ) के गीतों में नवगीत के लक्षण स्पष्टतः परिलक्षित हुए। इसका एक गीत 'रुको–रुको महुवे की छाँव में 1958 में ही नवगीत के प्रवर्त्तक कवि श्री राजेंद्र प्रसाद सिंह द्वारा संपादित 'गीतांगिनी' में प्रकाशित हुआ है। नवगीत के संबंध में लिखते हुए 'नवभारत टाइम्स में श्रीकांत जोशी ने 'गीतांगिनी' में प्रकाशित नवगीत के लक्षणों से सम्पन्न जिन छः गीतों को रेखांकित किया उनमें एक गीत यह भी था। अर्थात "रुको रुको महुए की छाँव में " गीत से पाठक जी नवगीत कार के रूप में प्रतिष्टित होते हैं और हिंदी साहित्य को एक से एक गीत देकर समृद्ध करते हैं। उनके गीतों में लोक उसी तरह रचा बसा है जैसे सूरज में रौशनी और जल में शीतलता स उनके गीतों में प्रेम का स्वर विशुद्ध मांसल न होकर लोक का आदिम प्रेम है। उनके नवगीतों गाँव खेत नदी पहाड़, ताल तलैया, महुए के पेड़, बांसों के झुरमुट,चाँद, तुलसी, केसर, महीनो में क्वार भादो, अगहन सब नैसर्गिक रूपों में अपनी पूरी सुन्दरता के साथ प्रकट हुए हैं।

जैसे केसर की क्यारी सँवारी हुई,
.....
जैसी भादों की अनब्याही तुलसी हुई,
मेरा नन्हा–गाँव।
मेरा छोटा–सा गाँव।[3]

पाठक जी के नवगीतों में जट–जटिन,नटदृनटिन,राजा–रानी जोकि सदियों से लोक के मनोरंजन के साधन रहे हैं लोकगीतों और लोककथाओं के विषय रहे हैं को भी नवगीतों में स्थान दिया है। इसप्रकार उनके नवगीतों में लोकतत्व प्राणस्वरूप विद्यमान है और उन्हें अनुप्राणित करते हैं।

जिसमें बरगद की सेमल की
महुए की पीपल की
सांवरी सी छाँव
जिसकी गोदी में बैठी हुई नानी कहानी कहे
जट–जटिन, की कहानी, नटदृनटिन की कहानी
राजा दृरानी की कहानी
और संग–संग पुरवा पछ्वैया बहे
और बैठी हुई नानी कहानी

निष्कर्ष

लोक को बिना समझे नवगीत लिखना सरासर बेमानी है। इसका आशय ये कदापि नहीं है कि नवगीत, लोकगीत की तरह से लिखा जाए, परन्तु यह आवश्यक है कि नवगीत में लोकतत्व की उपस्थिति हो। नवगीतों में जब लोकतत्तवों का अभाव होता है तो उनकी उम्र बहुत कम हो जाती है। जो नवगीत श्रोता या पाठक के मन पर सीधे प्रभाव डालते हैं, वही कालजयी नवगीत बन पाते हैं। उन्हीं की चर्चा लम्बे समय तक होती है। लम्बे समय तक जीवित रहने वाले नवगीतों के लिए रचनाकार का नाम बहुत महत्व नहीं रखता, महत्व रखता है तो उसकी भाषा की सहजता, लोक से जुड़ाव, उसकी संप्रेषणीयता और उसकी प्रस्तुति। कूल मिलाकर जब लोक गीतों से अपनी वेदना को जोड़ पाता है तभी वह गीत आमजनों के कंठों का हार बनते हैं अन्यथा वे पीछे छूट जाते हैं स रामनरेश पाठक में अगहन की भोर शीर्षक गीत में लिखते हैं ....धानों की सोने की डंठल पर

हंसियों की झप–झप ने ताल दिए..
बिछुए की झांझों की पनघट पर शोर हुई [4]

जब अच्छी फसल हुई तो उसे बेचकर कृषक में झांझ वाली पायल ख़रीदा है। प्राचीन काल से पति का रोजगार के लिए प्रदेश जाना नायिका के लिए त्रासदी का विषय रहा है मगर जाना भी जरुरी है। नवगीतकार लोक की इस त्रासद भाव को

गीत की शक्ल देते हुए लिखता है।
बांसों के झुरमुट से
जाते परदेशी को देख
नई दुल्हन की गीली सी कोर हुई।
भोर हुई.....[5]

संदर्भ ग्रंथ

1. सिंह, राजेन्द्र प्रसाद. "गीत रचना और 'नवगीत'". हिंदी समय. महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय. त्मजतपमअमक 28 चतपस 2023.
2. (डा. सत्येन्द्र, लोक साहित्य विज्ञान, पृ.–367–368, द्वितीय संस्करण–1971)
3. मेरा गाँव पृष्ठ 23
4. अगहन की भोर पृष्ठ 18
5. वही पृष्ठ 20
6. हिंदी साहित्य का इतिहासः डॉ नागेन्द्र
7. हिंदी साहित्यः सर्वेक्षण एवं समीक्षाः डॉ श्यामनंदन प्रसाद सिंह
8. सिंह, राजेन्द्र प्रसाद. "गीत रचना और 'नवगीत'". हिंदी समय. महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय. त्मजतपमअमक 28 चतपस 20235. (डा. सत्येन्द्र, लोक साहित्य विज्ञान, पृ.–367–368, द्वितीय संस्करण–1971)
9. स्मृति संचयः सं० कृष्ण मोहन प्यारे श्रीमती मृदुला मिश्रा अनामाः प० रामनरेश पाठक
10. क्वार की साँझः प० रामनरेश पाठक
11. प्रक्रिया के एक कविः प० रामनरेश पाठक
12. एक गीत लिखने का मनः प० रामनरेश पाठक
13. मैं अथर्व हूँ: प० रामनरेश पाठक
14. अपूर्वा (अप्रकाशित): प० रामनरेश पाठक
15. शहर से गुज़रते हुए (कविता संकलन): प० रामनरेश पाठक
16. अश्वत्थ खड़ा है आज भी (कविता संकलन): प० रामनरेश पाठक
17. यह रेत चन्दन है (कविता संकलन): प० रामनरेश पाठक